Knowledge Consortium of Gujarat
Department of Higher Education - Government of Gujarat
Journal of Multi-Disciplinary - ISSN : 2279-0268

Continuous Issue - 23 | March – April 2018

वैदिकयुग में निरुपित यज्ञ और विधि विधान

हम भारतीयों का जीवन अतीत से प्रभावित है | हम आर्यों की संतान है और आर्यों की अमूल्य निधि वेद है | वेद 'विद्' धातु से बना है, जिसका अर्थ ज्ञान है | वेद वे अपौरुषेय ज्ञान है, जिन्होंने आदि से अब तक भारतीयों के जीवन को प्रभावित किया है | भारतीय आर्यों की संस्कृति के मूल आधार वेद संसार के प्राचीनतम ग्रन्थ माने जाते है | वेदों का अत्यधिक महत्व धार्मिक तथा दार्शनिक तत्वों के आधार पर तो है ही, लेकिन अन्य लौकिक विषयों का भी उन में समावेश है | भारतीय संस्कृति तथा सभ्यता वेदों से ही पल्लवित पुष्पित तथा फलित हुई है | भारतीय संस्कृति के स्रोत वेद है | वेद ज्ञान के वे अक्षयकोश है, जिन में सभी विषयों का समावेश है | सभी प्रकार का ज्ञान-विज्ञान वेदों में ही निहित है 'सर्व ज्ञानमयो हि स:'| चाहे वनस्पति विज्ञान हो, चाहे सृष्टि विषयक वार्ता हो, चाहे नौका निर्माण सम्बन्धी कला हो, चाहे औषधिशास्त्र की चर्चा हो, चाहे विज्ञान सम्बन्धी ज्ञान हो सब के अंकुर वेदों में ही विद्यमान है | इसलिए यह उचित ही कहा गया है 'भूतं भव्यं भविष्यच्च सर्व वेदात् प्रसिध्यति'| इह लौकिक और पारलौकिक दोनों प्रकार के सुखों की प्राप्ति के स्थान वेद ही है | भारतीय संस्कृति में वेद निंदक को नास्तिक कहा गया है - 'नास्तिको वेदनिन्दक' |

वैदिक युग के देवता विविध प्राकृतिक शक्तियों के मूर्तरूप थे, और आर्य लोग इन देवताओं के रूप में विश्व की मूलभूत अधिष्ठातृ शक्तियों की ही उपासना किया करते थे | देवताओं की पूजा और तृप्ति के लिए आर्य लोग यज्ञों का अनुष्ठान करते थे | वे यज्ञ में देवताओं के लिए आहुति देते थे तो बदले में उनसे पुत्र, धन, पशु, विजय प्राप्ति इत्यादि तथा सो वर्ष जीने की इच्छा रखते थे | इसलिए तो पुरोहितों का अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान था | ऋग्वैदिक आर्यों का ऐसा विश्वास था कि जब तक पुरोहित देवताओं का आह्वान नहीं करता तब तक यजमानों की स्तुति उन तक नहीं पहुँचती | पुरोहित यजमानों की तरफ से देवताओं की स्तुति करता था, यज्ञों में उनके लिए दीर्घायु, धनधान्य एवं सुख समृध्धि की भी कामना करता था और यजमान अपने पुरोहित के लिए हर संभव सुख सुविधा और संरक्षण प्रदान करता था | वैदिक काल में सर्व सांसारिक साधनों की फलप्राप्ति में यज्ञ की महत्ता सविशेष स्वीकार्य थी | यज्ञ केवल साधन नहीं पर सिध्धि है | यज्ञ से ही प्रकृति की आंतरिक शक्तियों पर प्रभुत्व मिल सकता है ऐसी घोषणा वैदिक काल की थी |

यज्ञ सम्पूर्ण पृथ्वी को धारण करनेवाला महत्वपूर्ण तत्व है | यज्ञ समस्त भुवन, ब्रह्मांड की नाभि अथवा केन्द्र है | वस्तुत: यज्ञ समस्त जगत का मूल है | सम्पूर्ण सृष्टि ही यज्ञमय है | यज्ञ निरंतर चलता है | जिस प्रकार समस्त प्रकृति सब जीव-जन्तुओं के लिए उपकारक है, उसी प्रकार आत्म बलिदान की भावना के कर्ण यज्ञ भी सब के लिए उपकारक है | वैदिक यज्ञ उदात्त है, विराट है, व्यापक है और लोकोपकारक है | यह यज्ञ सर्वजनकल्याण की भावना से पूर्ण है | यज्ञ स्रष्टा के प्रति आभार व्यक्त करने का उत्तम साधन है | इसलिए श्रध्धा, सत्य, विनम्रता और तपस्या के बिना यज्ञ की कल्पना नहीं की जा सकती | ऐसा यज्ञ हिंसा से युक्त हो ही नहीं सकता | यज्ञ अध्वर अर्थात ध्वर (हिंसा) से रहित है | परमेश्वर की स्तुति करते हुए वेदमंत्र में

कहा गया है की हिंसा रहित यज्ञ को तु सब और से व्याप्त करता है, वही देवताओं या प्राकृतिक पदार्थों अथवा विद्वानों को प्राप्त होता है |

अग्ने यं यज्ञमध्वरं विश्वत: परिभूरसि |

स इददेवेषु गच्छति ||

यज्ञ से अन्नादि तथा उत्तम रस प्राप्त होता है, इसलिए इसका अनुष्ठान किया जाना चाहिये और विद्वानों को इसका उपदेश करना चाहिए | यह यज्ञ वृष्टि का वर्धक है, क्योंकि इसके माध्यम से ही अग्नि में अर्पित पदार्थो को सूक्ष्म रूप में अलग अलग करके समस्त वायु मण्डल में पहुँचाकर वृष्टि में सहायक बनता है | यज्ञ में प्रमुख चार पुरोहितों है |

(१) होता - ऋग्वेद का पुरोहित 'होता' कहलाता है | 'होता' का अर्थ है 'आह्वान करने वाला'. 'होता' वही व्यक्ति होता था जिसने मंत्रों को शुध्ध करके, यज्ञ में उनका प्रयोग करके, देवताओं को बुलाने की शक्ति प्राप्त कर ली हो |

(२) उदगाता - सामवेद का पुरोहित 'उदगाता' कहलाता है | उदगाता का शाब्दिक अर्थ भी 'उच्च स्वर से गाने वाला' है | मंत्रो को स्वर सहित उच्च ध्वनि से गाने से यज्ञों का समुचित फल यजमानों को प्राप्त होता है |

(३) अध्वर्यु - यजुर्वेद का पुरोहित 'अध्वर्यु' कहलाता है | जिसका अर्थ है -'यज्ञ का सम्पादक'.

(४) ब्रह्मा - अथर्ववेद के पुरोहित का नाम 'ब्रह्मा' था | ब्रह्मा प्रत्येक यज्ञ सम्बन्धी विद्या को बताता है |

यजुर्वेद के मंत्रो का विषय यज्ञ - विधियों को सम्पन्न करना है | यजुर्वेद कर्मकाण्ड प्रधान है | देवताओं को प्रसन्न करने के लिए यज्ञों का विधान है | किस यज्ञ में किन किन मंत्रो का व्यवहार किया जाना चाहिए, इसकी विधिर्या यजुर्वेद में वर्णित है| अथर्ववेद में विविध यज्ञों के नाम मिलते है, महाव्रत, राजसूय, अग्निष्टोम, अश्वमेघ, अग्न्याधेय, सत्र, अग्निहोत्र, एकरात्र, द्विरात्र, उक्थ्य, चतुरात्र, पञ्चरात्र, षडात्र, षोडशी, सप्तरात्र, विश्वजित्, अभिजित्, साह्न, त्रिरात्र, द्वादशाह, चतुर्होतार:, चतुर्मास्य, पशुबन्ध इत्यादि नाम है |

यज्ञ दिव्य है क्योंकि देवों ने पहले सूक्तों अर्थात् स्तुतियों से युक्त सूर्य रूप अग्नि को उत्पन्न किया, फिर हवि को उत्पन्न किया | वह यज्ञ उनके शरीरों का रक्षक हो गया, उसे द्यौ:,पृथिवी, और आकाश जानता है | अभिप्राय यह है कि समस्त ब्रह्माण्ड में, सभी प्राकृतिक पदार्थों में यज्ञ का विस्तार है | वस्तुत: स्वयम् ईश्वर यज्ञस्वरूप है | इसलिए उस प्रजाओं के पालक सब के शासक से प्रार्थना की गई है कि वह सब प्राकृतिक पदार्थों तथा विद्वानों के द्वारा हमारे यज्ञ की वृध्धि करे | वैदिक युग के आर्यों की देवपूजा याज्ञिक कर्मकाण्ड द्वारा की जाती थी | यज्ञकुण्ड में अग्नि का आधान कर उसमें अन्न, समिधा, दूध, घी और सोमरस की आहुतियों देना याज्ञिक कर्मकाण्ड का मुख्य रूप था | यज्ञों द्वारा देवताओं का आवाहन कर तथा दूध, घी, अन्न आदि की आहुतियों से उन्हें संतुष्ट कर आर्य लोग अपने देवताओं से प्रजा, पशु, अन्न और तेजस्विता की प्राप्ति की याचना किया करते थे |

यज्ञ के प्रकार - आर्य गृहस्थों के लिए पांच महायज्ञों का अनुष्ठान आवश्यक समजा जाता था|

(१) देवयज्ञ - प्रात: और सायं दोनों कालों में विधिपूर्वक अग्न्याधान कर जो हवन किया जाए, उसे देवयज्ञ कहते थे |

(२) पितृयज्ञ - पितरों और पूजनीय व्यक्तियों के तर्पण व सम्मान का नाम पितृयज्ञ था |

(३) नृयज्ञ - अतिथियों की सेवा व सत्कार को नृयज्ञ या अतिथियज्ञ कहा जाता था |

(४) ऋषियज्ञ - प्राचीन ऋषियों द्वारा प्रतिपादित तथ्यों व ज्ञान का नियमपूर्वक अध्ययन, मनन, स्वाध्याय एवं ज्ञान में वृध्धि के प्रयत्न को ब्रह्मयज्ञ नाम दिया गया था |

(५) भूतयज्ञ - विविध जीव-जन्तुओ को बलि प्रदान कर संतुष्ट रखने से भूतयज्ञ सम्पन्न होता है |

इन दैनिक यज्ञोंके अतिरिक्त विशेष अवसरों पर विशेष यज्ञ भी किये जाते थे | अमावस्या के दिन दर्श-यज्ञ किया जाता था और पूर्णमासी के दिन पौर्णमास यज्ञ होता था | कार्तिक, मार्गशीष और माघ मासों में कृष्ण पक्ष की अष्टमी के दिन अष्टका यज्ञ का अनुष्ठान किया जाता था | श्रावण मास की पूर्णिमा को श्रावणी-यज्ञ और अग्रहायण (मार्गशीर्ष) मास की पूर्णिमा को अग्रहायणी यज्ञ किए जाते थे | इसी प्रकार चैत्र मास की पूर्णिमा के लिए चैत्री-यज्ञ का और आश्विन मास की पूर्णिमा के लिए आश्वयुजी यज्ञ का विधान था | कतिपय यज्ञ ऐसे भी थे, जिनके लिए प्रचुर द्रव्य की आवश्यकता होती थी, और जिन्हें सम्पन्न व्यक्ति ही सम्पादित कर सकते थे | ऐसा एक यज्ञ सोमयज्ञ था, जिसके लिए तिन वेदियाँ बनायी जाती थी, और उन तीनों के यज्ञकुण्ड में अग्न्याधान कर सोमरस की आहुतियों दी जाती थी | सोमयज्ञ एक दिन में भी पूरा किया जा सकता था, दो दिन से लेकर बारह दिन तक भी और इससे भी अधिक समय तक भी चलता था| एक अन्य यज्ञ अग्निष्टोम था जो पञ्च दिनों में पूर्ण होता था | चातुर्मास्य यज्ञ को चार चार महीनों में सम्पन्न किया जाता था | जब किसी व्यक्ति को राजा के पद पर अधिष्ठित करना होता था, तो राजसूय यज्ञ करना आवश्यक था, राजसूय यज्ञ किये बिना कोई व्यक्ति राजा के पद को नहीं प्राप्त कर सकता था सार्वभौम व चक्रवर्ती पद प्राप्त करने की आकांक्षा रखने वाले राजा अश्वमेघ यज्ञ का अनुष्ठान किया करते थे | इस यज्ञ में एक सुसज्जित अश्व को अन्य अनेक अश्वों तथा बहुत से रक्षकों के साथ स्वच्छन्द विचरण के लिए छोड़ दिया जाता था और जब वह विविध दिशाओं के प्रदेशों में विचरण कर निर्विघ्न वापस लौट आता था, तब अश्वमेघ यज्ञ की विधि संम्पन्न की जाती थी | अन्य सब प्रदेशों के राजाओं ने अश्वमेघयाजी राजा की सार्वभौम सत्ता को स्वीकार कर लिया है, यही प्रमाणित करना इस यज्ञ का प्रयोजन था | एक अन्य यज्ञ सौत्रामणि था, जिसमे सुरापान की प्रथा भी चल पड़ी थी | इसी प्रकार के अन्य भी अनेक यज्ञों का विधान वैदिक युग में मिलता है |

ब्राह्मण-ग्रंथो में अजामेघ, गोमेघ, और पुरुषमेघ सदृश ऐसे यज्ञों का भी विधान है, जिनसे बकरी व गाय जैसे पशुओं तथा मनुष्यों की यज्ञ में बलि दिए जाने की बात सूचित होती है | प्राचीन भारत में एक ऐसा समय आ गया था, जबकि यज्ञों में पशुओं की बलि दी जाने लगी थी और यज्ञकुण्ड के समीप ऐसे युपों का निर्माण किया जाने लगा था जिनसे वध्य पशुओं को बांधा जाता था | महात्मा बुध्ध के समय में इस प्रकार पशुबलि दिए जाने के प्रमाण विद्यमान है | वरना पहले तो यज्ञों में दुग्ध,घृत,सोमरस और अन्न आदि की ही आहुतियाँ दी जाती थी | तब पशुबलि का विधान नहीं था | शतपथ आदि ब्राह्मण ग्रंथों में यज्ञ में पशुओं के लिए 'आलभन' का विधान आता है पर विद्वानों ने यह प्रतिपादित किया है के आलभन का अर्थ केवल वध नहीं होता, अपितु स्पर्श भी होता है | यज्ञों में पशुओं का स्पर्श किया जाता था | उनका आलभन अर्थात् हिंसा नहीं की जाती

थी | ऐतरेय ब्राहमण आदि प्राचीन ग्रंथो में शुन:शेप का आख्यान दिया गया है, जिससे कतिपय विद्वानों ने यह अर्थ निकाला है कि वैदिक युगों में यज्ञों में मनुष्य की बलि देने की प्रथा थी | और ऐसे यज्ञों को पुरुषमेघ यज्ञ कहा जाता था | शुन:शेप को तीन युपों से बांधे जाने का उल्लेख मिलता है | शुन:शेप के पाशबध्ध होने तथा उसकी विमुक्ति के लिए वरुण से प्रार्थना किए जाने का भी उल्लेख है | मंत्र में 'त्रिषु द्रुपदेषु बध्धः' शब्द है जिनका सामान्य अर्थ है 'वृक्ष के तीन स्थानों पर बंधा हुआ |' समस्त सूक्त की भावना देखते हुए इसका बलि से कोई सम्बन्ध प्रतीत नहीं होता और न ही कहीं बलि का उल्लेख है | शुन:शेप की पाशबध्ध की विमुक्ति की जो प्रार्थना है, उसका अभिप्राय यही हो सकता है कि विविध प्रकार के पापों, प्रलोभनों व कामनाओं में बध्ध मनुष्य को पाप से मुक्त करने की प्रार्थना की गई है |

यह सुना जाता है कि पुराने समय में व्रीहि का पशु अर्थात चावल के आटे का पशु बनाया जाता था और उससे पुण्यलोकों के इच्छुक यजमान यज्ञ करते थे | बकरे को काटकर पकाया जाता था ऐसा उल्लेख मिलता है, लेकिन मंत्र का अर्थ है बकरे को पकाना नहीं पर व्रीहिमय पशु (चावल के आटे का पशु) मानना अधिक उचित है |

पुरुष सूक्त में प्रतीकात्मक यज्ञ का वर्णन है | यज्ञ द्वारा यज्ञ का यजन करने का उल्लेख है |

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् |

ते ह नाकंमहिमान: सचन्त यत्र पूर्वे साध्या: सन्ति देवा : ||

सृष्टि के आरम्भ में सब प्राकृतिक शक्तियों ने परमदेव की पूजा, विभिन्न पदार्थों के संगतिकरण द्वारा और उन पदार्थों को देकर सृष्टि निर्माण रूपी यज्ञ में सहयोग किया | इस सूक्त में सृष्टियज्ञ का वर्णन है, जिसमें सृष्टि के उद्देश्य से स्रष्टा सब कुछ होम देता है | तभी सब प्रकार के पशुओं, पक्षियों की सृष्टि होती है, तभी चारों वेदों की सृष्टि होती है | भौतिक जगत् में यदि मनुष्य कुछ निर्माण करना चाहता है तो उस निर्माण यज्ञ में वो अपनी सब वृत्तियों, अपना सब कुछ होम देता है - तभी सृष्टि होती है |

जिन वेदों में यजमान के पशुओं की रक्षा की प्रार्थना की गई है, जिन वेदों में अनेक स्थानों पर पशुओं की हिंसा का निषेध है, जिन वेदों में गाय का नाम ही अघ्न्या अर्थात् हिंसा के अयोग्य, अहिंसनीय है, जिन वेदों में इहलोक और परलोक में भी गौओं की गुणोत्तर श्रेणी में वृध्धि की अभिलाषा की गई है, और जिन वेदों में पशुओं, विशेष रूप से गौ के घातक को मृत्युदंड देने, मृत्यु के पास पहुँचाने का, उसका सर काट देने का विधान है, उन वेदों में पशुबलि का विधान असम्भव है |यज्ञ की इस उदात्त भावना में पशुबलि के लिये कोई स्थान नहीं है |

यज्ञ त्याग की उदात्त भावना है, जिस पर सारी सृष्टि टिकी है | हम प्रार्थना करते है कि हमारी आयु, प्राण, नेत्र, कर्ण आदि इन्द्रियों और पीठ अर्थात् रीढ़ या शरीर के नाड़ी तंत्र का आधार यज्ञ से अर्चना करके समर्पण में अपना सामर्थ्य सिध्ध करे |

सन्दर्भ ग्रन्थ

I. संस्कृत वांग्मय का इतिहास, डा. मधु सत्यदेव, राधा पब्लिकेशन्स - नई दिल्ही
II. बहुश्रुत - वैदिक संस्कृति, सम्पादक - विजय पंडया, प्रकाशक - संस्कृत सत्र, कैलास गुरुकुल : महुवा
III. वैदिक साहित्य का इतिहास, प्रो. जीतेन्द्र देसाई, पाश्व प्रकाशन - अहमदावाद
IV. संस्कृत साहित्य का विशद इतिहास, डॉ. पुष्पा गुप्ता, ईस्टर्न बुक लिंकर्स - दिल्ही
V. संस्कृत-शोध-लेखमाला, डॉ. मुहम्मद इसराइल खों, फ्रीसेन्ट पब्लिशिंग हाउस, गाजियाबाद
VI. प्राचीन भारतीय इतिहास का वैदिक युग, लेखक - सत्यकेतु विद्यालंकार - श्री सरस्वती सदन - दिल्ही
VII. वैदिक वांग्मय विश्लेषण, डॉ. कृष्णलाल, जे. पी. पब्लिशिंग हाउस - दिल्ही

****

ઇ.પ્રિ. ડૉ. મમતાબેન પંડિત
શ્રીમતી પી. આર. પટેલ આર્ટ્સ કોલેજ
પલાસર

Copyright © 2012 – 2018 KCG. All Rights Reserved. | Powered By: Knowledge Consortium of Gujarat